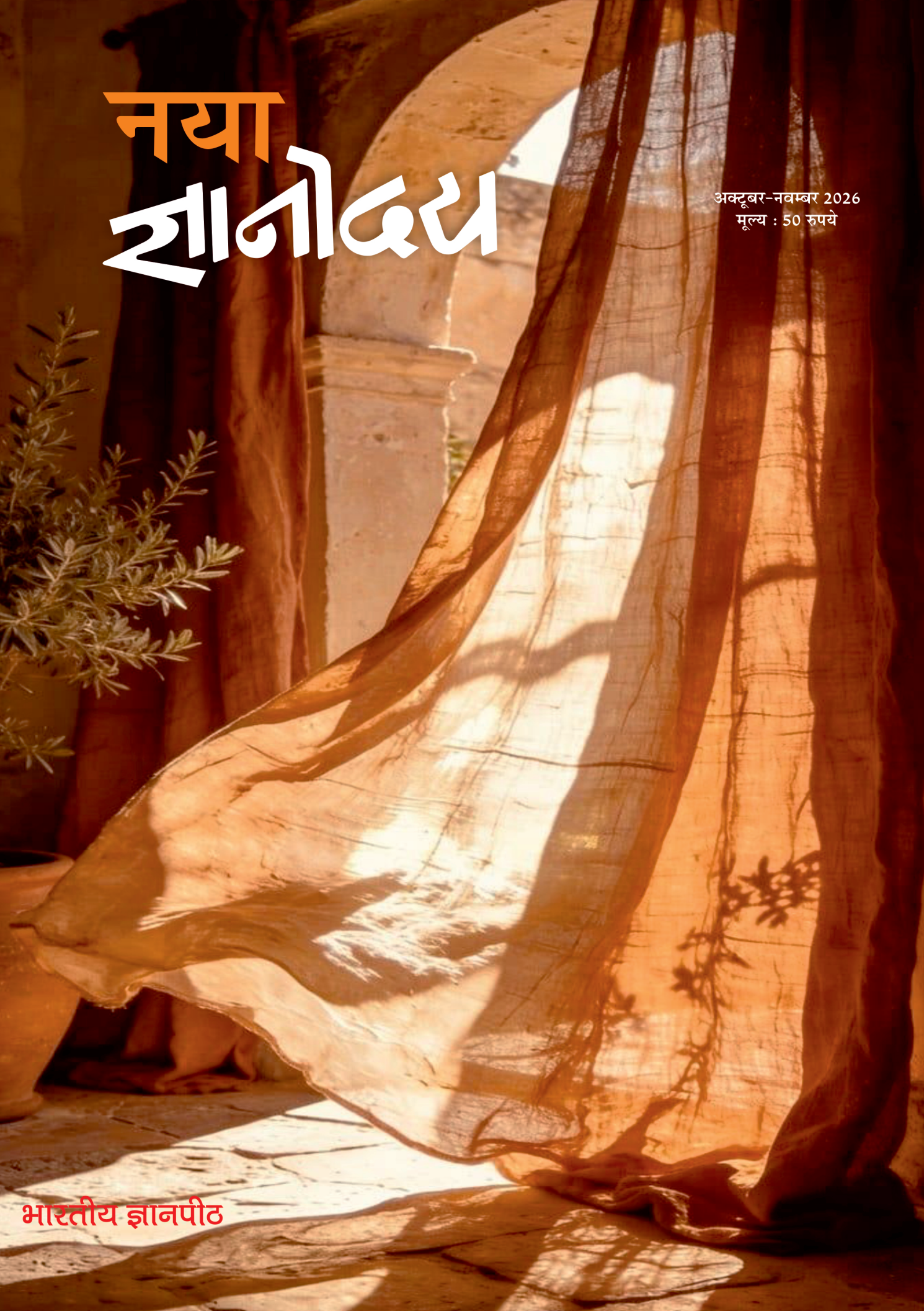
नया ज्ञानोदय

अक्टूबर-नवम्बर 2026
मूल्य : 50 रुपये



भारतीय ज्ञानपीठ

भारतीय ज्ञानपीठ

संस्थापक

श्रीमती रमा जैन

श्री साहू शांति प्रसाद जैन

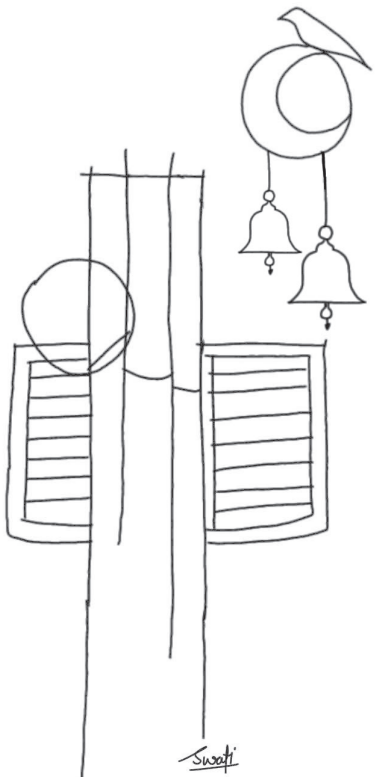


सम्पादक

महेश्वर

प्रबंध-सम्पादक

आर.एन. तिवारी



नया ज्ञानोदय

साहित्य, समाज, संस्कृति और कलाओं पर केंद्रित

अंक: 241, अक्टूबर-नवम्बर 2026

नया ज्ञानोदय

साहित्य, समाज, संस्कृति और कलाओं पर केंद्रित

अंक: 241, अंक: 241, अक्टूबर-नवम्बर 2026
पृष्ठः 84 (आवरण सहित)

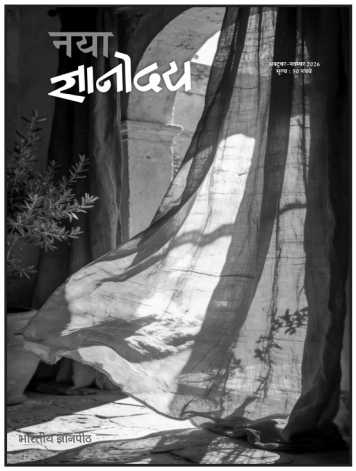
साहू अखिलेश जैन
प्रबन्ध न्यासी, भारतीय ज्ञानपीठ

प्रकाशकः **भारतीय ज्ञानपीठ**
18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली-110 003
फोनः 011-2462 6467, 2469 8417, 4152 3423

ई-मेल : nayagyanoday@gmail.com
संपादकीय संपर्क : me.maheshwarone@gmail.com
सदस्यता हेतु : bookclub@jnanpith.net,
महाप्रबंधक : gmbharatiyajnanpith@gmail.com

वेबसाइटः **www.jnanpith.net**

Naya Gyanodaya
A Literary Bi-monthly Magazine
Editor: **Maheshwar**
Language: **Hindi**
Published by **Bharatiya Jnanpith**
18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110 003



सम्पादक
महेश्वर

प्रबंध-सम्पादक
आर.एन. तिवारी

मूल्यः
50 रुपये + 16 रुपये (डाक खर्च)

व्यक्तियों/संस्थाओं के लिएः
वार्षिक (6 अंक): 420 रुपये (डाक खर्च सहित, साधारण डाक से)
वार्षिक (6 अंक): 730 रुपये (डाक खर्च सहित, रजिस्टर्ड डाक से)

नया ज्ञानोदय की ई-प्रति www.notnul.com पर उपलब्ध है।

शुल्क 'भारतीय ज्ञानपीठ' (**Bharatiya Jnanpith**) के नाम से, उपर्युक्त पते पर चेक या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम से भेजें।

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।
प्रकाशित रचनाओं के विचार से भारतीय ज्ञानपीठ का सहमत होना आवश्यक नहीं।
समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अन्तर्गत विचारणीय।



नया ज्ञानोदय

अंक: 241, अक्टूबर-नवम्बर 2026

इस अंक में

04 अभिमत
05 संग-साथ

आलेख

6 आदिवासी इतिहास : ऐतिहासिक विस्मृति एवं उपनिवेशीकरण का दंश : सुभाष चंद्र कुशवाहा

कहानी

15 घटाटोप : **सुभाष शर्मा**
26 उम्मीद से ज्यादा : **रमेश कुमार 'रिपु'**
32 मोह निद्रा : **इंदिरा दाँगी**
44 पल भर में : **मुकुल जोशी**
48 हसदेव वाया कालीमाटी : **कृपाशंकर**

ज़ूम इन

51 पवन करण की कविताएं

कवि पल्लव

53 नीतू गुजराल की कविताएँ

कहना न होगा

55 मैं अपने पुरखों की ज़मीन का वारिस हूं **: लीलाधर मंडलोई**

कहा-कही

57 शिवमूर्ति की किस्सागोई : **पंकज शर्मा**

गुडरीड्स

60 स्त्रीद्वेष, यूरोप और साहित्य : **वैभव सिंह**

क्रॉस बार्डर

63 अमीन मुग़ल: पंजाबियत का निर्वासित मसीहा : **दुष्यन्त**

सबरंग

66 सप्तक संगीत समारोह : **राजेन्द्र शर्मा**

सेल्युलाइड चैएर

69 सिनेमा की भाषा : सिनेमा एक भाषा : **विभावरी**

पंजाबी कविता के युवा स्वर (अनु. डॉ. जसविंदर कौर बिंद्रा)

72 अजय तनवीर
73 करनजीत कोमल
74 खुशवीर कौर ढ़िल्लन
75 विर्क पुष्पिंदर
76 संदीप शर्मा

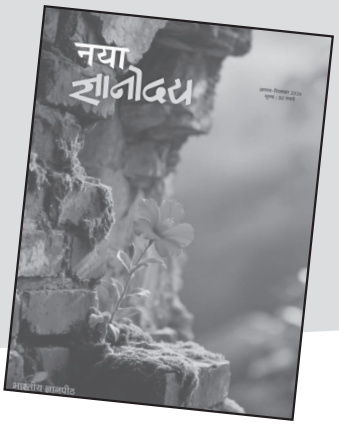
पुस्तक समीक्षा

77 रब करे कदे वी कोई अपनी जड़ तो न बिछड़े : **वंदना राग**

80 देश-दुनिया की साहित्यिक हलचल

भीतरी रेखांकन : स्वाति बनरवाल
आवरण व साज-सज्जा : ज्ञानपीठ कला प्रभाग

अभिमत



अगस्त-सितम्बर अंक का कहानी खंड विशेष रूप से अच्छा लगा। 'नशा', 'गार्ड', 'वापसी', 'तलब दूसरी दुनिया की', 'सहरसा का वो सर्कस' और 'माँ पतंग बनना चाहती है' अलग-अलग परिवेश और अनुभवों को सामने लाती हैं। इन कहानियों में कहीं श्रम और संघर्ष है, कहीं पारिवारिक संबंधों की जटिलता, तो कहीं स्मृति और बीते समय की आत्मीयता शामिल है। हरियश राय की कहानी 'गार्ड' पढ़ते हुए हमारे आसपास काम करने वाले उन लोगों की जिंदगी पर ध्यान जाता है, जिन्हें हम रोज देखते तो हैं, लेकिन उनके संघर्षों को जानने की कोशिश नहीं करते।

अजय कुमार, पटना

नया ज्ञानोदय के अगस्त-सितंबर अंक के आलेखों ने साहित्य और कला को देखने के कुछ नए रास्ते खोले। प्रेम शशांक का मुक्तिबोध पर आलेख विचार और रचना के संबंधों को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण लगा। मुक्तिबोध को किसी एक विचारधारा में सीमित करने के बजाय उनकी वैचारिक बेचैनी और रचनात्मक जटिलता को देखने की कोशिश लेख को गंभीर बनाती है। दूसरी ओर प्रतापराव कदम का किशोर कुमार पर आलेख कला के सामाजिक सरोकार और कलाकार के अपनी मिट्टी से संबंध की ओर ध्यान खींचता है।

प्रदीप तिवारी, वाराणसी

'नया ज्ञानोदय' का अगस्त-सितंबर अंक पढ़ते हुए सबसे अच्छी बात यह लगी कि इसमें विषयों की विविधता बनी हुई है। साहित्य के साथ समाज, संस्कृति, कला और संगीत से जुड़े विषयों को भी जगह दी गई है। ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित आर. वैरामुत्तु के स्वीकृति-भाषण से अंक की शुरुआत होना भी उल्लेखनीय लगा। इसके बाद आलेख, कहानियाँ, कविताएँ और भारतीय भाषाओं की रचनाएँ लगातार पाठक की रुचि बनाए रखती हैं। आज जब अधिकांश सामग्री बहुत जल्दी पढ़कर भूल जाने वाली होती जा रही है, ऐसी पत्रिका का हाथ में होना अच्छा अनुभव है, जो पाठक को कुछ देर ठहरकर पढ़ने और सोचने का अवसर देती है। अंक में गंभीर सामग्री के साथ विषयों की विविधता भी है, इसलिए इसे एक बैठक में पढ़ने के बजाय धीरे-धीरे पढ़ना अधिक अच्छा लगा।

राजेश प्रजापति, जयपुर

इस अंक में साहित्य के साथ भारतीय भाषाओं और अलग-अलग विधाओं को जो स्थान दिया गया है, वह विशेष रूप से अच्छा लगा। सविता सिंह की कविताओं के साथ ओड़िया कहानी 'इंतजार' और गुजराती कविता के युवा स्वरों को पढ़ना सुखद अनुभव रहा। इससे यह महसूस होता है कि हिंदी की साहित्यिक पत्रिका दूसरी भारतीय भाषाओं के साहित्य से संवाद कायम कर सकती है। आज साहित्य के सामने भाषायी सीमाएँ और पाठकीय दूरी दोनों बड़ी चुनौतियाँ हैं। ऐसे में विभिन्न भारतीय भाषाओं की रचनाओं का हिंदी पाठकों तक पहुँचना जरूरी है। अंक की कहानियाँ भी अलग-अलग सामाजिक अनुभवों से परिचित कराती हैं।

सुमन शर्मा, दिल्ली

'नया ज्ञानोदय' के स्थायी स्तंभों को पढ़ना हमेशा की तरह इस अंक में भी सुखद रहा। 'कहना न होगा', 'कहा-कही', 'गुडरीड्स', 'क्रॉस बार्डर', 'सबरंग', 'सेल्युलाइड चैप्टर' और पुस्तक समीक्षा जैसे स्तंभ पत्रिका को केवल रचनाओं का संकलन बनने से बचाते हैं। हर स्तंभ अपनी अलग प्रकृति और विषय के कारण अंक में विविधता लाता है। विशेष रूप से 'कहा-कही' और 'गुडरीड्स' जैसे स्तंभ साहित्यिक दुनिया के अलग-अलग पहलुओं से परिचित कराते हैं, जबकि 'सबरंग' और 'सेल्युलाइड चैप्टर' साहित्य से बाहर के सांस्कृतिक संसार की ओर ले जाते हैं। इन स्तंभों की निरंतरता भी पत्रिका की पहचान का हिस्सा बन चुकी है। नियमित पाठक के रूप में इन स्तंभों का अगला अंक आने का इंतजार रहता है।

स्वातिश्री, दिल्ली

अगस्त-सितम्बर अंक की प्रस्तुति संतुलित और आकर्षक लगी। साहित्य, समाज, संस्कृति और कला से जुड़ी विविध सामग्री का संयोजन इसे एक समृद्ध अंक बनाता है। आलेख, कहानियाँ, कविताएँ, भारतीय भाषाओं की रचनाएँ और स्थायी स्तंभ क्रमबद्ध ढंग से पाठक को आगे ले जाते हैं। गंभीर सामग्री के बावजूद अंक में एकरसता नहीं आती। साहित्य को समाज और संस्कृति से जोड़कर प्रस्तुत करना इसकी विशेषता है। कुल मिलाकर यह ऐसा अंक है जिसे पढ़ने के बाद दोबारा पढ़ने की इच्छा होती है।

पंकज राय, भागलपुर

संग-साथ

'नया ज्ञानोदय' का यह अंक मेरे लिए इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इसमें प्रकाशित रचनाएँ विषय और शिल्प की विविधता के बावजूद अपने समय के उन सवालों से लगातार संवाद करती हैं, जिनसे हमारा समाज आज गहरे रूप से जूझ रहा है। इतिहास, आदिवासी जीवन, सत्ता, शिक्षा, स्त्री-अस्मिता, प्रेम, स्मृति, युद्ध, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और बदलते सामाजिक संबंधों के बीच से गुजरता हुआ यह अंक हमें यह सोचने के लिए विवश करता है कि साहित्य अपने समय को केवल दर्ज ही नहीं करता, बल्कि उसके भीतर छिपे प्रश्नों को पहचानने और उन्हें देखने की नई दृष्टि भी देता है।

सुभाष चंद्र कुशवाहा का आलेख 'आदिवासी इतिहास : ऐतिहासिक विस्मृति एवं उपनिवेशीकरण का दंश' इतिहास की उस मुख्यधारा पर सवाल उठाता है, जिसमें आदिवासी समाजों की स्मृतियों, संघर्षों और योगदान को लंबे समय तक पर्याप्त स्थान नहीं मिला। मौखिक परंपरा, लोक-स्मृति और सामुदायिक अनुभवों को इतिहास की समझ में शामिल करने की आवश्यकता इस आलेख को हमारे वर्तमान से जोड़ती है। इतिहास केवल राजाओं, युद्धों और सत्ता-परिवर्तनों का विवरण नहीं है; वह उन समुदायों की स्मृति भी है, जिनकी आवाजें अक्सर लिखित इतिहास के बाहर रह गईं। आज जब विकास, विस्थापन और संसाधनों पर अधिकार के प्रश्न फिर से हमारे सामने हैं, तब इस आलेख की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है।

इस अंक की कहानियाँ अपने-अपने ढंग से हमारे सामाजिक जीवन की जटिलताओं को सामने लाती हैं। सुभाष शर्मा की 'घटाटोप' शिक्षा और परीक्षा-व्यवस्था में राजनीतिक हस्तक्षेप, भ्रष्टाचार और नैतिक पतन पर तीखा व्यंग्य करती है। रमेश कुमार 'रिपु' की 'उम्मीद से ज्यादा' मानवीय संबंधों, अपेक्षाओं और आत्मसम्मान के बीच बनने वाले भावनात्मक तनाव को रेखांकित करती है। इंदिरा दाँगी की 'मोह निद्रा' नंदिनी की संदिग्ध मृत्यु के बहाने ग्रामीण सत्ता-संबंधों, जातीय वर्चस्व, आर्थिक निर्भरता, स्त्री की असुरक्षा और उस सामूहिक भय को सामने लाती है, जिसमें सच सबको मालूम होता है, लेकिन उसे कहने का साहस किसी के पास नहीं होता। मुकुल जोशी की 'पल भर में' भी इस अंक की उल्लेखनीय कहानियों में है, जो रोजमर्रा के जीवन में घटने वाली छोटी-सी घटना और एक क्षण की मनःस्थिति के माध्यम से मनुष्य के अहं, आवेग, आत्मबोध और समय की क्षणभंगुरता को रेखांकित करती है। कृपाशंकर की 'हसदेव वाया कालीमाटी' विकास, उद्योग, जंगल और मनुष्य के बीच बदलते संबंधों तथा उस विकास-दृष्टि पर विचार करने का अवसर देती है, जिसमें स्थानीय जीवन और प्रकृति के प्रश्न कई बार पीछे छूट जाते हैं। इन सभी कहानियों को साथ पढ़ने पर स्पष्ट होता है कि कहानीकार अलग-अलग संसारों में जाकर भी अंततः मनुष्य और व्यवस्था के संबंधों की पड़ताल कर रहे हैं।

कविता खंड इस सामाजिक यथार्थ के बीच मनुष्य के निजी संसार को भी उतनी ही गंभीरता से सामने लाता है। पवन करण की कविताओं में प्रेम, देह, स्मृति, संबंध और सामाजिक विडंबना एक-दूसरे में घुलते दिखाई देते हैं। नीतू गुजराल की कविताओं में प्रेम, विरह, स्त्री-जीवन और स्मृतियों की कोमल, लेकिन गहरी उपस्थिति है। इनके साथ ही पंजाबी कविता के युवा स्वर इस अंक की भाषिक और सांस्कृतिक सीमा को और व्यापक बनाते हैं। अजय तनवीर, करनजीत कोमल, खुशवीर कौर ढिल्लों, विर्क पुष्पिंदर और संदीप शर्मा की रचनाओं में आज के समय की बेचैनी, युद्ध, बेरोजगारी, बदलते संबंध, अवसरवाद और उम्मीद के अलग-अलग रूप दिखाई देते हैं। इन कविताओं का हिंदी में आना केवल अनुवाद की प्रक्रिया नहीं, बल्कि दो भाषाई-सांस्कृतिक संसारों के बीच संवाद का विस्तार भी है।

इस अंक के स्थायी स्तंभ भी इसकी वैचारिक निरंतरता को बनाए रखते हैं। 'कहना न होगा' में लीलाधर मंडलोई द्वारा अशोक कुमार पांडेय के व्यक्तित्व और रचनात्मक यात्रा को याद करना साहित्य और वैचारिक प्रतिबद्धता के संबंध को सामने लाता है। पंकज शर्मा का शिवमूर्ति की किस्सागोई पर लिखा लेख उनकी कथा-दृष्टि और ग्रामीण समाज के जटिल जीवन-संसार को समझने का अवसर देता है। 'गुडरीड्स', 'क्रॉस बॉर्डर', 'सबरंग' और 'सेल्यूलाइड चैप्टर' अपने-अपने क्षेत्र की सांस्कृतिक गतिविधियों और कलात्मक संसार से पाठकों को जोड़ते हैं। ज्योति चावला के कहानी-संग्रह 'चाबी, घर और अंधेरा' पर वंदना राग की समीक्षा स्मृति, विस्थापन, विभाजन, भूगोल और भाषा के विविध अनुभवों को रेखांकित करती है। 'देश-दुनिया की साहित्यिक हलचल' के माध्यम से हिंदी पाठक वैश्विक साहित्यिक परिदृश्य में घट रही महत्त्वपूर्ण घटनाओं से परिचित होते हैं।

इस अंक की रचनाएँ इसे केवल रचनाओं के संग्रह तक सीमित नहीं रहने देतीं, बल्कि उसे साहित्य, कला और संस्कृति की व्यापक दुनिया से जोड़ती हैं। 'नया ज्ञानोदय' का यह अंक पाठकीय जागरूकता, संवेदना और संवाद की एक सार्थक कोशिश है। आशा है, आप इसे केवल पढ़ेंगे नहीं, बल्कि इसकी रचनाओं के साथ अपने समय और समाज को भी नए सिरे से देखने की कोशिश करेंगे।

—महेश्वर (सम्पादक)



आदिवासी इतिहास : ऐतिहासिक विस्मृति एवं उपनिवेशीकरण का दंश

सुभाष चंद्र कुशवाहा

भारतीय इतिहास लेखन की सबसे बड़ी त्रासदियों में से एक यह रही है कि यहाँ दस्तावेजों या ऐतिहासिक अवशेषों को संरक्षित रखने तथा विरोधी विचारों और कृतियों को लिपिबद्ध करने की समुचित संस्कृति विकसित नहीं हो सकी। दूसरे शब्दों में कहें तो विस्मृतिकरण भारतीय हिंदूकरण की एक बुनियादी प्रवृत्ति रही है। यही कारण है कि सदियों पूर्व विदेशी इतिहासकारों का ही भारत आगमन दिखाई देता है, न कि किसी भारतीय इतिहासकार का बाहर जाकर अन्य समाजों का अध्ययन करना। इतिहास लेखन की व्यवस्थित शुरुआत ब्रिटिश सत्ता के आगमन के बाद ही दिखाई देती है। इससे पूर्व यहाँ कथाओं, गाथाओं और सीमित दायरे वाली दृष्टियों का प्रभुत्व दिखाई देता है। यह और भी आश्चर्यजनक है कि लोकगाथाओं और लोकसाहित्य के संग्रह एवं लिपिबद्धीकरण का कार्य भी मुख्यतः अंग्रेज़ी विद्वानों द्वारा किया गया, चाहे वे आल्हा-ऊदल, रानी सारंगा, लोरिक या रेशमा-चूहड़मल की गाथाएँ हों या लोकगीतों के संग्रह।[1]

ज्ञान गरिमा के 82 वर्ष
भारतीय ज्ञानपीठ

इतिहास-विस्मृति का दोष मुख्यतः यहाँ के कुलीन शिक्षित समाज पर ही मढ़ा जाएगा, क्योंकि मूलवासियों अर्थात् आदिवासी समुदायों की भिन्न जीवन-संस्कृति तथा आर्य संस्कृति से उनके निरंतर टकराव और दुराव के कारण उन्हें शिक्षा से दूर रखा गया। फलतः उनके द्वारा स्वयं अपना इतिहास लिख पाना संभव नहीं हो सका। भारतीय कुलीन समाज आदिवासी नायकों को इसलिए भी महत्त्व नहीं देना चाहता था कि वह अपने नायकों की श्रेष्ठता का बखान करता रह सके।

यहाँ की वर्णवादी दृष्टि में समाज के व्यापक हिस्से को अछूत, अस्पृश्य अथवा तथाकथित नीच जाति मानने की मानसिकता के कारण आदिवासियों को सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संरचनाओं से अलग रखने का कुचक्र निरंतर चलता रहा। चूँकि वर्णवादी दृष्टि में ईमानदारी से सामाजिक इतिहास का निरूपण करने की परंपरा संभव ही नहीं थी, इसलिए पक्षपाती दृष्टिकोण से विस्मृतिकरण को अपनाना यहाँ की ऐतिहासिक प्रवृत्ति बन गई।

सच्चाई यह है कि आदिवासी इस भूभाग के प्राचीनतम वासिंदे होने के बावजूद अशिक्षा और औपचारिक ऐतिहासिक संरचनाओं

***सुभाष चन्द्र कुशवाहा** : हिंदी के सुप्रसिद्ध कथाकार, इतिहासकार, कवि, आलोचक एवं संपादक हैं। कुशीनगर के ग्राम जोगिया जनूबी पट्टी में जन्मे कुशवाहा ने सांख्यिकी में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। उनकी 25 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं, जिनमें लाला हरपाल के जूते, चौरी-चौरा : विद्रोह और स्वाधीनता आंदोलन, अवध का किसान विद्रोह, भील विद्रोह और गोंड आदिवासी प्रमुख हैं। उनकी अनेक शोधपरक रचनाएँ और 60 से अधिक कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। वर्ष 1998 से वे लोकरंग का संपादन कर रहे हैं तथा अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत हो चुके हैं।*

1. Sadhana Naithani, In Quest of Indian Folktales: Pandit Ram Gharib Chaube and William Crooke (Bloomington: Indiana University Press, 2006), pp. 1–18.